देश–द्रोह

पांडेय बेचन शर्मा

देश-द्रोह

https://www.hindiadda.com/desh-droh/

17 नवंबर, सन 1845 ई. की बात है। मारे सर्दी के निशा-सुंदरी काँप रही थी, और काँप रहा था उसी के साथ संपूर्ण पंजाब-प्रदेश। चारों ओर अंधकार-ही-अंधकार दिखाई पड़ रहा था। विस्तृत नील गगन के विशाल वक्ष पर श्वेत नक्षत्र क्रीड़ा कर रहे थे। मानो असितांगों पर श्वेतांगों के प्रभुत्व का चित्र उपस्थित कर रहे हों।

ऐसे समय में लाहौर-राज्य के तत्कालीन मंत्री (महारानी जिंदाँ का कृपा-पात्र होने के कारण, अकालियों का विरोध होने पर भी, राजा लालसिंह को मंत्री के अधिकार प्राप्त हुए थे।) अपने लाहौरी मकान के एक बड़े कमरे में, पलँग पर, दुशाले से मुँह छिपाए पड़े थे। न-जाने लालसिंह क्या विचार रहे थे। न-जाने किस समस्या ने उनके हृदय में आंदोलन उपस्थित कर रखा था। पर इसमें कोई संदेह नहीं कि वह किसी विकट चिंता में थे।

उन्होंने एकाएक मुँह खोलकर कुछ बुदबुदाना आरंभ किया - 'हानि क्या है इसमें? महाराज दलीपसिंह हमारे कौन? रानी जिंदाँ...'

जिंदाँ का ध्यान आते ही लालसिंह क्षण-भर के लिए रुके।

'जिंदाँ? रूप का भंडार, शक्ति की अधिष्ठात्री, धन की राशि, रानी जिंदाँ पर...। परंतु असंभव। पर असंभव कैसे? जिंदाँ का तो मुझ पर पूर्ण विश्वास है, और मेरे हाथों में है इस समय स्वर्गीय महाराज रणजीतसिंह का संपूर्ण राज्य। फिर असंभव कैसा?

'राज्य! इसके लिए तो संसार सब कुछ करता है! फिर? क्या मैं संसार के बाहर हूँ? राज्य के लिए जहाँगीर ने अपने बाप अकबर के विरुद्ध विद्रोह किया था। उसी राज्य के लिए शाहजहाँ ने भी...'

लालसिंह प्रसन्न हो उठे। उनके चेहरे पर हँसी की एक लकीर खिंच गई।

'ओ हो! शाहजहाँ का उदाहरण तो विचित्र मिला। उसने अपने बड़े भाई को भूखों मार डाला था, और शस्त्र धारण किया था जहाँगीर के विरुद्ध! राज्य के लिए - वह पराक्रमी मुगल, जिसके नाम से भारतवर्ष ही क्यों, संसार परिचित है - कूटनीति-पटु औरंगजेब ने क्या-क्या नहीं किया? ओह! दारा कैसी भयंकरता से मारा गया था! दारा ही क्यों? मुराद और शुजा को क्यों भूल रहा हूँ। शाहजहाँ का बंदी होना भी तो इसी राज्य ही की एक लीला थी।

'आज लाहौर-दरबार ने अंगरेजों के विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी है। इस युद्ध में, लक्षण ऐसे जान पड़ते हैं, सिक्ख लोग जी-जान से अंगरेजों के सर्वनाश की चेष्टा

करेंगे। वे नहीं चाहते कि महाराज रणजीतसिंह की राई-भर भूमि पर भी किसी विदेशी का अधिकार हो। वे अपने बालक महाराज के राज्य पर किसी विदेशी की गृद्ध-दृष्टि नहीं देखना चाहते।

'पर इस समय मुझे क्या करना चाहिए? लाहौर-दरबार में फूट का भयंकर राज्य है। यहाँ का एक-एक कर्मचारी एक दूसरे के बढ़ने की चेष्टा में है। फिर मैं यह बहुमूल्य अवसर क्यों खोऊँ? इस समय तो मैं सेनापति भी हूँ। एक टुकड़ा कागज, जरा-सी स्याही और दो शब्द, बस। ब्रिटिश सेनापति लॉर्ड गफ को मैं अपने वश में कर लूँगा। फिर तो गर्वनर जनरल मेरे ही होंगे।

'ऐं! अंतस्तल के इस कोने में यह क्या गड़बड़ है? क्या? देश-द्रोह? हट! देश-द्रोह कुछ भी नहीं। चारो ओर स्वार्थ - फिर देश-द्रोह कैसा? देश किसी के साथ चलता है? सब भ्रम है - माया है - प्रवंचना है - ढोंग है! देश-द्रोह कुछ भी नहीं।'

इसी समय कमरे में किसी के पैरों की आहट सुनाई पड़ी। चौंककर लालसिंह ने देखा, जया सामने खड़ी मुस्किरा रही है। जया एक अनाथ बालिका। इसे लालसिंह ने दया कर अपने आश्रय में रख लिया है। जया जानती भी नहीं कि वह कब से लालसिंह के आश्रय में है। वह तो उन्हें 'पिताजी' और उनकी स्त्री को 'माँ' कहकर पुकारा करती है। न-जाने क्यों लालसिंह जया पर बहुत स्नेह रखते थे।

जया ने कहा - 'पिताजी, अंगरेजों से लड़ाई होगी?'

लालसिंह - 'हाँ।'

जया - 'कब से?'

लालसिंह - 'बहुत ही शीघ्र।'

जया - 'सुना है, इस युद्ध में सिक्ख-सेना के सेनापति आप ही होंगे।'

इतने प्रश्नोत्तरों से लालसिंह खीझ गए। उनके विचार-स्रोत में बाधा पड़ी थी न। मुँह बिगाड़कर कहा - 'हाँ, मैं ही सेनापति हूँ। बस, या और कुछ पूछना है?'

जया - 'यदि और भी कुछ पूछूँ, तो इस समय तो आपको फुरसत है? दिन-भर तो राज्य-प्रबंध में रहते ही हैं, रात को घरवालों की खबर लेनी चाहिए।'

लालसिंह - 'आखिर क्या पूछना है? पूछो भी।'

जया - 'आप लाहौर कब छोड़ेंगे?'

लालसिंह - 'बहुत जल्द।'

जया - 'पिताजी, लड़ाई कैसे होती है? फौजों का संचालन कैसे होता है? क्या बहुत-से लोग मरते हैं? सुना है, युद्ध में खून की नदियाँ बहा करती हैं। इस बार मैं भी आपके साथ चलूँगी। ले चलिएगा पिताजी?'

लालसिंह आश्चर्य-चकित हो जया के मुख की ओर देखने लगे। बोले - 'तू कैसे चलेगी? लड़कियाँ लड़ाई में नहीं जातीं।'

जया - 'पर मैं तो चलूँगी ही। नहीं ले चलिएगा?'

जया ने लालसिंह का हाथ अपने कमल करों में ले लिया।

लालसिंह क्या उत्तर दें?' बोले - 'अच्छा, मैं ले चलने को तैयार हूँ, पर अपनी माँ से पूछ लेा'

'अच्छा, माँ को यहीं बुलवाती हूँ। रेवती! नानी!'

नानीजी आईं! वह और कोई नहीं, लालसिंह की एक वृद्धा दासी थी। उसे लड़कपन से ही जया 'नानी' कहकर पुकारा करती थी।

जया ने रेवती से कहा - 'नानी, जरा माँ को तो बुला लाओ।'

जया से 'अच्छा' कहकर रेवती ने लालसिंह की ओर देखकर कहा - 'सरकार, एक अर्ज मेरी भी है।'

'कह।'

'मेरे दो लड़के हैं।'

'मालूम है।'

'उन्हें मैं आपके सुपुर्द करना चाहती हूँ!'

'वे क्या काम कर सकते हैं?'

'घर का काम नहीं मालिक, बाहर का काम। उन्हें आप अपनी सेना में भर्ती कर लीजिए।'

'तेरे दो ही लड़के हैं न?'

'जो।'

'तब दोनों को लड़ाई में क्यों भेजना चाहती है?'

'लड़ने के लिए। गुरू के नाम पर मर मिटने के लिए मालिक, गुरु की जिंदगी भी तो लड़ने में ही समाप्त हुई थी। वह भी तो स्वदेश-रक्षा के लिए विजातियों से लड़े थे। उनके भी तो लड़के मारे गए थे! मैं गुरु के नाम पर अपने दयालु महाराज रणजीतसिंह का ऋण अदा करने के लिए अपने दोनों लड़कों को आपके हाथों में देती हूँ।'

आश्चर्य-चकित होकर सेनापति लालसिंह ने कहा - 'अच्छी बात है। तुम्हारा बड़ा लड़का हमारी सेना में ले लिया जाएगा। छोटे को अपने पास ही रहने दो।'

'छोटा मेरे पास रहकर क्या करेगा? इस समय पंजाब पर, गुरु के पवित्र पंचनद प्रवेश पर, विपत्ति है। आप मेरा सर्वस्व ले जाइए मालिक! इस समय मेरी अवस्था साठ वर्ष से अधिक है। मैंने संसार का खूब अनुभव किया है। बेटा, बेटी, धन, राज्य, सभी भले कामों में लगाना चाहिए। ऐसा ही गुरु का वचन है। स्वदेशोद्धार से भला दूसरा कौन-सा काम होगा? आप मेरे दोनों पुत्र को ले जाइए!'

बूढ़ी जया की माँ को पुकारने चली गई। लालसिंह अवाक् हो बूढ़ी की बातों पर विचार करने लगे।

वह देखिए, महाराज रणजीतसिंह के 'हाथ-पैर' सतलज पार कर रहे हैं। ये वे ही बहादुर सिक्ख योद्धा हैं, जिनके नाम से बर्बर अफगान भी डरते हैं। ये अंगरेजों से लोहा लेने जा रहे हैं।

जरा सैनिकों का उत्साह देखिए! अपने ही हाथ से नावों पर सामान लाद रहे हैं, अपने ही हाथों से तोपें खींच रहे हैं। क्लांति तो उनके पास भी नहीं फटकती। एक सैनिक जमादार ने तोप खींचनेवाले कुछ सिक्ख जवानों का भाव जानने के लिए उनसे पूछा -'तुम लोग छोटे-से-छोटा काम अपने हाथ से करते हो, इससे तुम असंतुष्ट तो नहीं हो?'

एक साथ ही सबने उत्तर दिया - 'हम स्वदेश की रक्षा करने और अपने प्रिय महाराज का गौरव अक्षुण्ण रखने जा रहे हैं। यह हमारी स्वाधीनता की लड़ाई है, इससे हम छोटे-से-छोटा काम करना भी बुरा नहीं समझते।

सतलज पार सिक्खों का पड़ाव पड़ा है। वह सामने सेनापति लालसिंह का खेमा है। उसके भीतर तो देखिए।

खेमे के भीतर लालसिंह और चेतसिंह बैठे बातें कर रहे हैं। चेतसिंह ने कहा - 'मुझे आने में कुछ देर तो अवश्य हो गई, पर करता क्या, कल ही से इस पेसोपेश में हूँ कि क्या किया जाय। हाँ, एक बात तो बतलाइए। आपके खेमे के रक्षकों में वह नया सैनिक कौन है? शायद उसे मैंने लाहौर में कहीं देखा था।'

लालसिंह - 'आपका अंदाज ठीक है। वह हमारे घर की दासी रेवती का बड़ा पुत्र मोहनसिंह है। वह हाल में ही नौकर रक्खा गया है।'

चेतसिंह - 'जया भी साथ आई है न?'

लालसिंह - 'हाँ। उसे आप एक विचित्र प्रकार की लड़की समझिए। बचपन से ही उसे युद्ध से प्रेम है। आपके आने से पहले वह मेरे पास ही बैठी प्रार्थना कर रही थी कि उसे भी लड़ने की आज्ञा मिल जाय। हा...हा...हा! विचित्र लड़की है!'

चेतसिंह - 'अब मतलब की बातें हों। मैं अंगरेजों से मिलने के लिए बिलकुल तैयार हूँ। आपकी क्या राय है?'

लालसिंह - 'मैं आपसे बाहर थोड़े ही हूँ।'

चेतसिंह - 'अच्छी बात है। अंगरेज-एजेंट मिस्टर निकलसन के पास पत्र लिखिए। अभी मेरे सामने ही लिखिए। अधिक देर की आवश्यकता नहीं।'

पास ही से लालसिंह ने कलम, दावात और कागज लेकर लिखना आरंभ किया -

'आप जानते ही होंगे कि मैं अंगरेजों का मित्र हूँ। इस समय मैं विशाल सिक्ख-सेना सहित सतलज-पार उतर आया हूँ। आप कहिए, मुझे क्या करना चाहिए?

- लालसिंह

पत्र लिखने के बाद लालसिंह ने चेतसिंह को सुना दिया और बोले - 'कुछ और?'

चेतसिंह - 'बस, इतना बहुत है। इसे भेजोगे किसके द्वारा? मैं अपने साथ एक विशेष आदमी लाया हूँ। वह बाहर खड़ा है। कहिए, तो बुलाऊँ?'

'अभी ठहरिए सेनापति चेतसिंहजी!' कहती हुई जया ने खेमे में प्रवेश किया। जया? लालसिंह स्तब्ध रह गए। क्या उसने छिपकर कुछ सुन लिया है?

जया - 'पिताजी, किसे बुलाना है?'

लालसिंह - 'तुम भीतर जाओ।'

जया - 'क्यों पिताजी? मेरे सम्मुख ही क्यों नहीं अपने देश के सर्वनाश की भूमिका बाँधते? मैं रोकूँगी नहीं, और न मुझमें आपको रोकने की शक्ति ही है। पर आखिर आप लोग यह कर क्या रहे हैं?'

चेतसिंह - 'इस विषय में तुम्हें बोलने का कुछ भी अधिकार नहीं जया! भीतर जाओ।'

जया - 'जया, भीतर जाओ। शर्म नहीं आती महाराज! तुम जानते नहीं कि कितना बड़ा पातक कर रहे हो? छिः-छिः! स्वर्ग-तुल्य पंजाब में विदेशियों को तांडव के लिए निमंत्रित कर रहे हो? यही वीर-धर्म है? तुम्हारे पास हृदय है ही नहीं?'

लालसिंह ने देखा, अब सीधे काम नहीं चलता। उन्होंने डाँटकर कहा - 'जया, भीतर जाओ। बहुत हुआ यदि तुम स्वयं न जाओगी, तो मैं किसी सैनिक द्वारा तुम्हें जबरदस्ती खेमे में भिजवा दूँगा।'

जया गरजकर बोली - 'बस, समाप्त हो गया। अब तुम - देश-द्रोही - मेरे पिता कहलाने योग्य नहीं रह गए। अब मैं एक क्षण भी तुम्हारे आश्रय में नहीं रह सकती। आह! भगवान! पृथ्वी पर ऐसे नारकीय जीव भी हैं? राक्षस-सेनापति के रूप में स्वदेश और महाराज की रक्षा करने चले हैं! नीचो! रोओगे'

जया बाहर जाने को तत्पर हुई। लालसिंह ने देखा, सब भंडा फूटा चाहता है। उन्होंने पुकारा - 'मोहन!'

मोहन हाजिर हुआ। लालसिंह की आज्ञा हुई - 'इसे गिरफ्तार कर लो।'

'अरे! मोहन, तुम सेनापति की आज्ञा का उलंघन कर रहे हो?'

'क्षमा करें सेनापति, मैं बाहर से सब कुछ सुन रहा था। ओफ। आप लोग बड़े ही भयंकर व्यक्ति हैं। मैं आपकी नौकरी से इस्तीफा देता हूँ। ध्यान रहे, मेरे मार्ग में कुछ भी बाधा उपस्थित की, तो आप दोनों को समाप्त करने के बाद ही गिरफ्तार हो सकूँगा।'

उसने जया से कहा - 'चलो कुमारी, हम भी किसी ओर चलकर इन राक्षसों से स्वदेश की रक्षा करने की चेष्टा करें!'

चेतसिंह और लालसिंह कुछ भी न बोल सके। जया और मोहन सिक्ख शिविर के बाहर हो गए!

फिरोजपुर से बीस मील की दूरी पर, मुदकी के मैदान में, आज **(18** दिसंबर**, 1845)** क्या हो रहा है? चारों ओर अग्नि वृष्टि! चारों ओर मार-काट!! एक ओर अंगरेज सिक्खों का सर्वस्व नाश करना चाहते हैं, क्योंकि उन्हें धन-धान्य मय, वीर जनक पंजाब प्रदेश चाहिए। दूसरी ओर सिक्ख वीर अंगरेजों के नाश पर कटिबद्ध हैं, क्योंकि उन्हें दृढ़ विश्वास है कि अंगरेज उनकी जन्मभूमि को अपनाना चाहते हैं - उनकी माता को बंदिनी बनाना चाहते हैं।

पर अभागे सिक्खो! तुम्हें परतंत्र होना ही पड़ेगा, क्योंकि तुम्हारी सेना का नायक लार्ड गफ का-सा स्वदेश-भक्त और ड्यूक ऑफ वेलिंगडन का सा वीर नहीं। वह तो लालसिंह है, जिसने षड्यंत्र करके अपने बालक राजा ध्यानसिंह के प्राण तक लिए हैं! वह तो चेतसिंह है, जिसे वीर धर्माभिमानी नपुंसक के अलावा और कुछ भी नहीं कह सकते। वह देखो, अंगरेज सेनापति अपनी सेना का संचालन कैसी योग्यता से कर रहा है? और लालसिंह? वह नीच कायरों की तरह चुपचाप खड़ा युद्ध का परिणाम देख रहा और कामना कर रहा है, तुम जल्द मरकर नष्ट हो जाओ। जानते हो, वह सब क्यों हो रहा है? वह पर-पक्ष से मिल गया है। उसे पूर्ण आशा है कि विजयोपरांत शत्रुओं की ओर से उसे कुछ जूठन मिलेगी। आह! अभागे सिक्खो!

जो हो, सेनापति के अकर्मण्य होने पर भी सिक्ख-सेना ने अंगरेजों को दिखा दिया कि हम बताशे नहीं। पंजाब की मर्यादा के लिए सिक्खों ने विपक्षियों पर ऐसा भीषण प्रहार किया कि उनकी सिट्टी गुम हो गई। अंगरेज आपस में ही गोली चलाने लगे।

अंत में व्याकुल होकर अंगरेजी-सेना, संगीन तानकर सिक्ख-सेना पर दौड़ी। इस बार सिक्खों के पैर उखड़ते-से दिखाई पड़े। अंगरेजों की छाती दूनी हो गई। सिक्ख पीछे हटने लगे।

भगवान भुवन-भास्कर! भागते कहाँ हो? जरा तो ठहर जाओ। क्या तुम सिक्खों का पतन नहीं देखना चाहते? पर इसमें उन अभागों का क्या दोष है? लालसिंह की ओर देखो। चेतसिंह पर दृष्टि डालो। आह! तुम डूब रहे हो? अच्छा, डूबो।

चारो ओर मुर्दे! चारो ओर आर्तनाद! चारो ओर रक्त-स्रोत और बीच में कुछ आदमियों के साथ लालसिंह और चेतसिंह। ये लोग मशाल की रोशनी में मुर्दों को उलट-उलटकर न-जाने क्या ढूँढ़ रहे हैं। क्या खो गया है लालसिंह? विपक्षियों से मिला हुआ कोई कृपा-पात्र तो नहीं?

चेतसिंह - 'आपने उसे कहाँ देखा था?'

लालसिंह - 'यहीं। भाई साहब, वे दोनों ऐसी वीरता से युद्ध कर रहे थे कि उसके स्मरण-मात्र से मुझे रोमांच हो आता है। ओह! मैं नहीं जानता था कि जया में इतना बल है। ईश्वर जानता है, उसने अकेले बीसों शत्रु-सैनिकों को काट डाला था।'

लालसिंह की आँखों में जल आ गया। वह जया को बहुत प्यार करते थे।

'अब न मिलेगी।' कहकर लालसिंह एक रक्त के गड्ढे के पास खड़े हो गए। उन्होंने जोर से पुकारा - 'जया!' काली रात चिल्ला उठी - 'जया!' लाशों से पटी युद्ध-भूमि चिल्ला उठी - 'जया!' पास का अरण्य, करुण कंठ से कराह उठा - 'जया!' पर उत्तर किसी ने न दिया।

लालसिंह पुनः ढूँढ़ने लगे। एक स्थान पर मुर्दों का भयंकर स्तूप था। वहाँ से लालसिंह ने सुना, कोई 'पानी, पानी' पुकार रहा है। वह तुरंत पुकारनेवाले के पास पहुँचे। वह जया थी। उसके शरीर पर संगीन के सैकड़ों घाव थे, फिर भी अभी उसमें दम था।

लालसिंह ने झपटकर जया को गोद में उठा लिया। आह! जया रो पड़ी। उसने कहा - 'मुझे छोड़ दो। मेरी पवित्र मृत्यु को अपने स्पर्श से भ्रष्ट न करो। हाय प्रभो! मेरा पिता और देश-द्रोही!'

चाँदी के पात्र में जल आया, पर जया ने तो लहू घूँटकर प्राण दे दिए थे!

https://www.hindiadda.com/desh-droh/